ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 257-261

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

भवानी प्रसाद मिश्र की रचनाओं में आधुनिकता और परम्परा

1. डॉ0 सुमित मोहन
2. कर्ण सिंह यादव

1. प्रोफेसर, 2. शोधार्थी, हिन्दी विभाग, जे.एस. विश्वविद्यालय शिकोहाबाद (उ0प्र0) भारत

Received- 02 .12. 2021, Revised- 07 .12. 2021, Accepted - 11.12.2021 E-mail: aaryavrat2013@gmail-com

सारांश: ***भवानी भाई के उत्कर्ष युग की कविताएँ सन् 1956 से सन् 1967 लगभग दस वर्ष की कालावधि का इतिहास अपने में समेटे हुए हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद का मोहभंग कहीं–कहीं मार्क्सवाद पर प्रहार कहीं गाँधी की याद तो कहीं–कहीं पर कवि बचपन के दिनों को याद करता हुआ नर्मदा के किनारे या चांदनी रात में टिमटिमाते तारों में खो जाता है। स्वतन्त्रता मिलने के ठीक बाद का समय जहाँ राजनीतिक उथल–पुथल और गाँधी के अभाव से भरा हुआ था वहीं आजादी मिलने के लगभग 15–20 साल के बाद का राजनीतिक परिवेश आम आदमी की आशाओं और आस्थाओं को तोड़ने वाला रहा। कहीं तो चीन का आक्रमण कहीं कांग्रेस का आपातकाल घोषित करना इन सभी घटनाओं ने कवि के मन मस्तिष्क को झकझोरा। भवानी भाई ने लिखने के मामले में सदा से जोखिम उठाया। आपातकाल में उन्होंने कांग्रेस सरकार का खुलकर विरोध किया। उन्होनें कांग्रेस सरकार के जुल्मों का खुलकर विरोध किया।***

कुंजीभूत शब्द– उत्कर्ष युग, कालावधि का इतिहास, मोहभंग, मार्क्सवाद, राजनीतिक उथल–पुथल, परिवेश ।

वह कहते हैं ''मुझे इन जुल्मों के जिम्मेदार चार व्यक्ति दिखाई दिए– तत्कालीन राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली अहमद, इन्दिरा गाँधी, तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष देवकांत बरूआ और संजय गाँधी। यह स्थिति असहनीय थी और विचार के भीतर से एक कविता फूट पड़ी– 'चार कौए उर्फ चार हौए' कविता की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

''बहुत नहीं थे सिर्फ चार कौवे थे काले।
उन्होनें यह तय किया कि सारे उड़ने वाले।
उनके ढ़ंग से उड़ें, रुकें, खाये औ जाएं।
वे जिसको त्यौहार कहें सब उसे मनायें।''

उन्होनें नेताओं पर तीखा व्यंग्य किया है।

''कभी–कभी जादू हो जाता है दुनिया में।
दुनिया भर के गुण दिखते हैं औगुनिया में।
ये औगुनिए चार बड़े सरताज हो गए।
इनके नौकर चील, गरूड़ और बाज हो गये।''

कई उतार–चढ़ाव देखते हुए भवानी भाई की कविताएँ नित नयापन लेकर आगे बढ़ती गयीं। आधुनिकता और परम्परा दोनों नदी के दो किनारों के समान उनकी काव्ययात्रा में उनकी सहगामी रहे।

1. उत्कर्ष–युग की रचनाओं का वैशिष्ट्य– भवानी भाई की उन्नयन काल की रचनाएँ जहाँ स्वतन्त्रता संघर्ष और स्वतन्त्रता प्राप्ति के तरानों से ओत–प्रोत रही हैं वहीं उत्कर्श युग की रचनाओं में राजनीतिक उथल–पुथल, युद्धों, का विनाशकारी स्वरूप स्वतन्त्रता से मोहभंग और थोड़ा बहुत प्रकृति से जुड़ी पाई जाती हैं। सन् 1974 का वर्ष भारत के लोकतंत्र में बेहद उथल–पुथल का रहा है। भारत बांग्लादेश युद्ध, 1975 में इमरजेंसी लागू होना सभी का कवि के मन मस्तिश्क पर प्रभाव पड़ा है। कवि की 'चार कौवे उर्फ चार हौए' कविता आपातकाल लागू किए जाने के जिम्मेदार लोगों पर लिखी गई है जो देखने मे कुछ–कुछ 'गीतफरोश' के समान है जिसमें तीखे व्यंग्य और वक्रोक्तियों का प्रयोग किया गया है। कवि की बाद की कविताओं में आत्मचेतना की सजगता और सक्रियता देखने को मिलती है। आत्याचार और अनाचार कवि के निशाने पर रहे। कवि ने कभी भी अपनी सजगता को नहीं छोड़ा जहाँ उसे राजनीति या बड़े–बड़े नेताओं की खामियाँ नजर आईं, आम जनता मजदूरों का शोषण दिखाई दिया उसने फट से इसका कड़ा विरोध किया। वह चीजों, लोगों और समय को बेधड़क दृष्टि से देखता रहा जैसे हमेशा देखता आया था। कवि ने समाज से गाँधी के मूल्यों और आदर्शों को मिटता देख उन्हें फिर से समझने और परखने का एक अवसर इन कविताओं में लिया है। कहीं–कहीं कवि पर मार्क्सवाद और आस्तित्ववाद का प्रभाव भी देखने को मिलता है। लेकिन उन्होनें अस्तित्ववाद को कभी अपनी कविता में ढोया नहीं। वह मार्क्सवाद का और अस्तित्ववाद के लिए कहते हैं–

''मार्क्सवाद ही क्यों मै तो अस्तित्वाद को भी अधूरा और अधमरा जीवन दर्शन पाता हूँ। जिसमें सडांध है– बदबू है – थकान है – मौत का अंधेरा है– और यह सब मुझे कभी नहीं भाया। मैंने हमेशा फूल, सुगन्ध, नदी से प्यार किया है– और प्यार–

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

प्रकृति ही मेरी कविता है। मार्क्सवाद मानव इतिहास को समझने की एक वैज्ञानिक पद्धति है– वह जीवन–दर्शन नहीं है। अस्तित्ववाद का तो आधार ही मौत है। मवाद है – यह तो रोग है। इस रोग के कीटाणु नयी कविता में काफी तेजी से फैले हैं पर मैं इससे बचता फिरा हूँ। फिर भी यह बीमारी मेरी कविता में लग गई हो– तो क्या कह सकता हूँ। बीमारी तो बीमारी ही है। साहित्य को इस बीमारी से बचना चाहिए– बचाना चाहिए।''

देश की परिस्थिति देख कर उसे यह देश जंगल के समान प्रतीत हो रहा है। वह चाहता है कि इस समूचे देश को आग लगा दे–

''अब मेरा देश समूचा का समूचा एक ऐसा जंगल है
जिसमें पंछी नहीं हैं हिरन नहीं हैं
नहीं है सांभर चीतल और नीलगाय
दरिन्दे ही दरिन्दे हैं अब इसमें
अब धधका नहीं सकता मैं अपने मन की चिनगारियाँ इसमें
सारे देश को कैसे जला दूँ।
दरिन्दे ही अब सारे के सारे मेरा देश है
कैसे जला दूँ समूचे देश को;
देखता हूँ चुपचाप अपने शब्दों के ज्वलन्त और
लेलिहान परिवेश को।''

2. परम्परा का प्रतिफलन– (क) कथ्य– भवानी भाई की कविताओं में अनेकानेक स्थानों पर हमारी सभ्यता, संस्कृति, दर्शन, इतिहास, अतीत, आदि के दर्शन मिलते हैं। ''वह जीवन भर खादी की कविता कात्ते रचते रहे।'' गाँधी विचार दर्शन में उनकी अटूट आस्था रही है। चाहे हम उनकी कविताओं की संवेदना में झांककर देखे चाहे कविता की साज सज्जा और श्रृंगार में, हमें परम्परा अवश्य दिखाई पड़ेगी। नयी कविता आंदोलन ने कवि को भी अपने मे लपेटा लेकिन अन्य नयी कविता के कवियों के समान उन्होंने अस्तित्ववाद को कभी ढोया नहीं। 'अहमब्रह्मास्मि' की भावना ने उन्हें कभी नहीं छुआ। ईश्वर का अस्तित्व उसने कभी नहीं नकारा। वह भगवान की बात जब भी करते हैं, सीधी–स्पष्ट करते हैं। ईश्वर में उनकी आस्था निम्न पंक्तियों से साफ स्पष्ट होती है जिसमें वह देवी दुर्गा के महिशासुर के वध करने की घटना को दुबारा इस पापी संसार में घटित होता देखना चाहते हैं। वह देवी को जननी, धात्री और जीवन का प्राण कहते हैं–

''अब प्रलयंकर जाग उठे हैं, फिर तांडव नर्तन होगा
फिर महिशासुर का वध होगा, फिर भैरव गर्जन होगा
रक्त – बीज पर प्रभु की छाया भी अब मृत्यु समान है।
तू जननी है, तू छात्री है, तू जीवन का प्राण है। '' (लक्ष्मी की कविता)

कहीं कवि ईश्वर में आस्था और विश्वास की बात करता है तो कहीं पर वह बापू के आदर्शों और उनकी इच्छाओं का गला घुंटता हुआ देखकर चिन्ति हो उठता है। वह बापू को याद करता हुआ उनसे क्षमा याचना करता है साथ ही यह संकल्प करता है कि हम फिर निकृष्टता से उत्कृष्टता की ओर बढ़ेगे। वह अपने को ठहरा शिशुगण मानता है –

''हम ठहरे शिशुगण, क्षुद्र हमारे मन
पद–पद पर है पिता चरण स्खलन
फिर से हम उठेंगे ऊपर ऐसे
उन्नत न होगें अन्य कहीं भू पर जैसे
पृथ्वी पर कभी नहीं होगें हम अचेतन।'' (हम ठहरे शिशुगण)

(ख) शिल्प– तत्सम, संस्कृत, उर्दू के पारम्परिक शब्द भवानी भाई की रचनाओं में मिलते हैं। भवानी भाई की कविताएँ समय के साथ परिवर्तित होती चली गयीं। जहाँ कवि ने शुरूआत में अधिक छन्दोबद्ध कविताओं और पारम्परिक शैली, साथ ही साथ लयात्मकता पर अधिक बल दिया वहीं आगे चलकर उनकी कविताएँ मुक्त छन्द में अधिक लिखी गयी हैं पर हम देखते हैं कि परम्परा को वह पूरी तरह से खारिज नहीं कर पाये हैं।

भावानी भाई की बाद की कविताएँ नयी कविताओं की श्रेणी में अधिक पायी जाती हैं। नये मुहावरों भाषा शैली का प्रयोग भी अधिक हुआ और पारम्परिक शैली में लिखी गयी कविताएँ कम होती गयी हैं।

कहीं–कहीं कवि ने कुण्डली छन्द का प्रयोग किया है –

"नीकी पे फीकी न कर

बिन अवसर की बात।
गये शांति के दिन गये
आज युद्ध की रात!
आज युद्ध की रात
हाथ को हाथ न सूचे
शब्द– बेध की घड़ी सयाना सो जो जूझे
खड़ा द्वार पर शत्रु
प्रेम की चर्चा फीकी
मनुआँ मेरे आज रात अनरीती नीकी।" **(कुण्डली)**

कवि अपनी यादों को अग्नि वर्ण के हंस के रूप में और विगत वर्शों को आकाश जिसमें यह अग्नि वर्णो हंस उड़ता फिरेगा की कल्पना करते हुए एक अनूठा बिम्ब खींच रहा है –

"अग्निवर्णी हंस स्वर मानो सुधा में तैरने के बाद का
इस तरह का रूप मुझको आज लगता है तुम्हारी याद का
स्वच्छ नीले विगत कितने वर्श
हैं आकाश मानो इस दिशा से उस दिशा तक
इन्हीं में उड़ता फिरेगा
हंस मेरे देश के सौभाग्य का वह अग्निवर्णी
इस दिशा से उस निशा तक।" **(अग्निवर्णी हंस)**

कवि हमारी परम्परागत कहावत 'कर्म करो फल की चिन्ता न करो' को शब्दबद्ध करता है। वह 'है रंगमंच यह जगत' में हमें निस्वार्थ होकर कर्म करने की प्रेरणा देता है–

"झिझको मत
बोलो कम, ज्यादातर रंग भरो
अपना कर्तव्य करो
फल की इच्छा न धरो
किंचित मन में!"

3. परम्परा का सम्पूर्ण परिप्रेक्ष्य– वैसे तो भवानी भाई अपनी सृजन यात्रा के किसी भी पड़ाव में परम्परा से अछूते नहीं रहे हैं। जहाँ–जहाँ कवि का मन महका वहाँ–वहाँ उसने अपनी परम्परा को सहेजा, सँवारा और कलमबद्ध किया है। इसमें कवि का दोष नहीं बल्कि उसके मन में अपनी परम्परा, अपने देश, अपनी मिट्टी, अपने परिवार के प्रति जो अटूट, प्रेम भरा हुआ था बस वही प्रस्फुटित हो गया है।

जहाँ कवि का प्रारम्भिक रचना काल प्रकृति प्रेम और निजि अनुभवों में परम्परा को खोजता है, उन्नयन युग की रचनाएँ अंधी आधुनिकता के पीछे भागते मानव को रोकने, उसे सजग और सशक्त करने का आवाह्न करती हैं वहीं उसकी उत्कर्ष युग की रचनाएँ हमारी परम्परा, संस्कृति, मूल्यों की नींव पर खड़ी हैं जो हमें अनायास ही अपनी मिट्टी, अपने देश की सभ्यता, संस्कृति की ओर खींचती चली जाती हैं। क्षमा, दया की भावना, शांति का भाव उनकी 'अच्छा–बुरा' और 'युद्ध–विरोध में' कविता में प्रकट हुआ है। जैसा कि हमारी परम्परा में ऐसी मान्यता रही है कि हम प्रकृति के कण–कण में ईश्वर की व्याप्ति मानते हैं हम हर पेड़–पौधे को मनुश्य के समान सजीव मानते हैं, कवि ने भी इसी विचारधारा को लेकर 'पहले फूल की आत्मा' कविता बड़ी मार्मिकता से लिखी है जो सीधे हमारे हृदय को स्पर्श करती है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' प्रेम, अहिंसा, सेवा भाव भवानी भाई की कविताओं के रोम–रोम में बसा है। इस प्रकार सम्पूर्ण परिप्रेक्ष्य में उनकी कविताएँ परम्परा के साथ चली हैं जो कि उन्हें और भी मार्मिक और हृदयस्पर्शी बनाती हैं।

4. आधुनिकता का प्रतिफलन – (क) कथ्य– भवानी भाई चाहते हैं कि हम ऊँच–नीच की भावना को छोड़कर मानवता से रहें। आज के समय में विकास मनुश्य पर इतना हावी हो गया है कि धर्म, समाज, मानवता सब ताक पर रख दिए गये हैं वह कहते हैं –

"क्या बंटी रहेगी मानवता
कालों में श्वेतों में

छोटो में बड़ो में
धर्मों में वादों में
बल्कि इनकी यादों में।
क्योंकि कोई धर्म
क्या अब तक बचा है
बचा है क्या
साबित कोई वाद
किसी की कोई भी
अच्छाई क्या बाकी है ?''

(ख) शिल्प – यदि भवानी भाई की भाशा की बात की जाए तो उन्होंने अपनी संस्कृत, अरबी, फारसी, अंग्रेजी, देशज, तत्सम, तद्भव सभी शब्दावलियों का प्रयोग अपनी कविता में किया है। उनके द्वारा अरबी, फारसी, और संस्कृत, त्तसम शब्दों का एक साथ प्रयोग देखने योग्य है –

''ख्याल यह जब–तब मन में आ जाता है
और एक क्षण
अधिक स्नेह धरती–भर जीवन को करके
मन रह जाता है।
ऐसा होता नहीं कि इससे कोई परम प्रेरणा लेकर
मैं गृहीत इव केश धर्म, असि–धारा, पथ पर ही
चलने की धृति को धारूँ
अथक सहेजूँ
ऐसा होता नहीं कि मैं खैयाम सरीखा डूबूँ
किसी तनिक प्याले, कविता–पुस्तक में और जगत पर लानत भेजूँ।'' **(मत कहो)**

5. आधुनिकता और परम्परा का सम्पूर्ण परिप्रेक्ष्य – भवानी भाई की रचना यात्रा सतत् चलती रही है। जहाँ शुरूआती दौर में कवि ने बाल्यकाल के छोटे–छोटे अनुभवों और नन्हें मन की भावनाओं को अपनी लेखनी से प्रकट किया है वहीं एक समय ऐसा आया जब कवि अपने उत्कर्ष युग में पहुँचा। समय के साथ उसके अनुभव बदलते गये और रचना भी प्रौढ़ होती गयी। जिस प्रकार एक नदी अनेक उतार–चढ़ाव झेलती हुई अतंतः सागर में मिल जाती है, कहीं उसका बहाव तेज होता है तो कहीं धीमा, कहीं उसकी धारा पतली होती है तो कहीं चौड़ी लेकिन बहने की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है उसी प्रकार भवानी भाई की रचनाओं में आधुनिकता और परम्परा का समावेश हमेशा ही रहा है बस थोड़ा–बहुत उसके अनुपात मे अन्तर मात्र आया है।

जहाँ भवानी भाई के आगे की रचनाओं में आधुनिकता ने अपने पैर कम पसारे हैं वहीं उत्कर्ष युग मे वह उभर कर सामने आई है। यदि उनके उत्कर्ष युग पर समग्रतः दृश्टि डालें तो हम पाते हैं कि भावानी भाई दोनों विचारों को साथ–साथ लेकर चले हैं बस कहीं–कहीं आधुनिकता हमें ज्यादा देखने को मिलती है चाहे वह शिल्प में हो या रचनाओं के कथ्य में जिसे हम समय का तकाजा भी कह सकते हैं। आधुनिक भारत के आधुनिक होते लोगों को उन्हीं की शैली में समझाने का भवानी भाई ने अप्रतिम प्रयास किया है। जिसने उन्हें एक सफल कालजयी रचनाकार की श्रेणी मे लाकर खड़ा कर दिया है।

6. निष्कर्ष– कहने का आशय यह है कि भावनी प्रसाद मिश्र के काल के इस उत्कर्श युग में पहली बार उन के कृतित्व में आधुनिकता और परम्परा का संतुलन हमें उपलब्ध होता है। भावानी भाई की एक अन्यतम विशेशता यह है कि उनका व्यक्तित्व उनकी कविता में निरन्तर प्रतिबिम्बित होता रहता है। कवि का व्यक्तित्व प्रौढ़ है– उसका चिन्तन नये युग की महत्वपूर्ण विचारधाराओं से ओतप्रोत है उसकी संवेदना यथार्थ बोध से अब प्राण–रस ग्रहण करने लगी है। यह मौलिक परिवर्तन उनके उत्कर्श काल के काव्य की स्पृहणीय विशेशता है। आज के युग में हम जिन विसंगतियों का सामना कर रहे हैं, कवि ने एक भविष्य दृष्टा की तरह उन विसंगतियों का अंकन किया है। किन्तु परम्परा का पाथेय उसकी सृजन यात्रा के लिए आव भाव ही नहीं अपरिहार्य भी है।

अब परम्परा उसके लिए कोई पृथक अस्तित्व नहीं बल्कि वह उसके व्यक्तित्व और रचनाधर्मिता में मिल गयी है। यह वैशिष्ट्य ही उसे आधुनिक कवियों से पृथक् करता है।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. दिनकर के काव्य में परम्परा और आधुनिकता : डॉ० जयसिंह 'नीरद'।
2. त्रिशंकु : अज्ञेय।
3. नयी कविता : स्वरूप और समस्याएँ : जगदीश गुप्त।
4. समसामयिकता और आधुनिक हिन्दी कविता : डॉ० रघुवंश।
5. समानान्तर : रमेशचन्द्र शाह।
6. आधुनिक साहित्य : संवेदना और दृष्टि : डॉ० रामदरश मिश्र।
7. भवानी प्रसाद मिश्र का काव्य संसार :कृष्णदत्त पालीवाल।
8. 'गीतफरोश' संवेदना और शिल्प : स्मिता मिश्र।

*****